सुखों का साधन यज्ञ

विगत मन्त्र में हमने यज्ञ के साधनों पर प्रकाश डाला था। इस मन्त्र में बताया गया है कि यज्ञ करने वाले प्राणी को कौन कौन से सुख मिलते हैं। इस संबंध में मन्त्र इस प्रकार प्रकाश दाल रहा है :-
घृताच्यसि जुहूर्नाम्ना सेदं प्रियेण धाम्ना प्रियं सदऽआसीद घृताच्यस्युपभृन्नाम्ना सेदं प्रियेण धाम्ना प्रियं सदऽआसीद घृताच्यसि ध्रुवा नाम्ना सेदं प्रियेण धाम्ना प्रियं सदऽआसीद प्रियेण धाम्ना प्रियं सदऽआसीद। ध्रुवाऽअसदन्नृतस्य योनौ ता विष्णो पाहि पाहि यज्ञं पाहि यज्ञपतिं पाहि मां यज्ञन्यम् ॥यजु.२.६ ॥

इस मन्त्र का भाष्य करते हुए स्वामी दयानंद जी सरस्वती ने लिखा है :-

जो यज्ञ पूर्वोक्त में वासु,रूद्र और आदित्य से सिद्ध होने के लिए कहा है वह वायु और जल की शुद्धि के द्वारा सब स्थान और सब वस्तुओं को प्रीति कराने हारे उत्तम सुख को बढाने वाले कर देता है सब मनुष्यों को उनकी वृद्धि व रक्षा के लिए व्यापक ईश्वर की प्रार्थना और सदा अच्छी प्रकर पुरुषार्थ करना चाहिए।

मन्त्र के भावार्थ के आलोक में जो बातें निखर कर सामने आती हैं, वह इस प्रकार हैं:-
विघ्नों को दूर कर क्रिया प्रवाही बनें:-
हम जब कभी भी कुछ कार्य करते हैं तो कार्य करते हुए हमारे मार्ग में बहुत सी बाधाएं आती रहती हैं। यह बाधाएं हमें हमारे किये जा रहे कर्म में बाधा खडी करती है, रुकावट पैदा करती है। यदि सामने से आ रही रुकावट को देखकर हम अपने कार्य का त्याग करदें तो फिर वह उत्तम कार्य कभी संपन्न हो ही नहीं सकता। इसलिए हमें आने वाली वाधाओं से कभी भी घबराना नहीं चाहिये किन्तु इन बाधाओं में से भी मार्ग निकाल कर अपने कार्य को संपन्न करने के लिए पुरुषार्थ को निरंतर बनाए रखना चाहिए और इस प्रकार हम अपने कार्य को संपन्न कर पाने में सफलता प्राप्त करें। अत : पुरुषार्थ का दामन किसी भी अवस्था में नहीं छोड़ना चाहिये। कार्य की सम्पन्नता से हमें खुशी मिलती है। यह खुशी ही हमारे सुखों का साधन होती है।

ज्ञानधन प्रभु की उपासना करें:-
परमपिता परमात्मा सब ज्ञानों का स्रोत है। उसने अपना ज्ञान वेद के रूप में हमें बांटा भी है। वह अपनी सन्तानों को परम ज्ञानी रूप में देखना चाहता है। उस पिता ने सृष्टि के आदि में ही हमारे लिए वेद के रूप में अपने ज्ञान का स्रोत खोल दिया था। इस कारण वह प्रभु ज्ञान रूपी धन का स्वामी है किन्तु उसकी यह

विशेषता भी है कि वह इस धन को सब को बराबर बांटता रहता है किन्तु मिलता उसी को है, जो इसे पाने के लिए पुरुषार्थ करता है। ज्ञान का भंडारी होने के कारण ही वह प्रभु ज्ञानधन भी कहलाता है। हम ज्ञान को पाने के पिपासु हैं। इसलिए हम ज्ञान को प्राप्त करने के लिए ज्ञान के आदि स्रोत अर्थात् परमपिता के निकट रहने का प्रयास करते हैं और अपना आसन प्रभु के निकट लगा लेते हैं।

दान और आदान क्रिया को सुचारू रखें:
मनुष्य का स्वभाव है कि वह सदा अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ उन लोगों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने में भी उन लोगों का सहयोग करे, जिन के पास अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए साधन स्वरूप धन का अभाव होता है। इन लोगों की जो लोग सहायता करते हैं, उन्हें दानी अथवा दानशील कहा जाता है। मन्त्र उपदेश कर रहा है कि हम अपनी दान की प्रवृति को नियमित रूप से बनाए रखें।

दानी होने के साथ ही साथ आदान का अभ्यास भी निरंतर बनाए रखें। इसका भाव है कि यदि कोई गुण या कोई ज्ञान किसी से मिलता है तो उसे तत्काल ग्रहण कर लेवें। दान देने और किसी से कुछ ग्रहण करने वाला व्यक्ति सदा प्रसन्न और सुखी रहता है।

दूसरों को खिला कर खाएँ:
कहा जाता है कि अकेला खाने वाला नरक में जाता है। मानव जीवन में अनेक प्रकार के यज्ञ बताये गए हैं। उनमें से पांच यज्ञों को हमारे ऋषियों ने महायज्ञ कहा है। महायज्ञ होने के कारण इनका महत्त्व अत्यधिक बढ़ जाता है। अत : इन पांच यज्ञों को प्रतिदिन करना प्रत्येक मानव के लिए अनिवार्य ही होता है। जो इन पांच यज्ञों में से एक यज्ञ भी छोड़ देता है तो वह सुखी नहीं रह सकता।

यह पाँच यज्ञ हैं:- १. ब्रह्म यज्ञ (आर्य समाज में इसे संध्या कहते हैं, जो कुछ विशेष मंत्रो के साथ प्रतिदिन दो काल सन्ध्या के समय किये जाने के कारण ही इसका नाम संध्या हुआ है) .

२. अग्निहोत्र:- प्रतिदिन दोनों समय हवन के साथ अपने वातावरण को शुद्ध करना। .३. बलिवैश्वदेव यज्ञ:- जीव जंतुओं को भोजन कराना अथवा मिष्ठान की आहुति यज्ञ में देना।

४. पितृ यज्ञ:- माता पिता और गुरु(आचार्य) आदि की सेवा करना।

५. अतिथि यज्ञ:-अकस्मात् आने वाले साधू-संन्यासी या वानप्रस्थी की सेवा सत्कार करते हुए उन्हें भोजनादि से तृप्त करना।

ये पांच यज्ञ हैं। इनमें से तृतीय यज्ञ बलिवैश्वदेव यज्ञ के अंतर्गत हमारी प्राचीन परम्परा चली आ रही है कि हम जव जंतुओं. पशु- पक्षियों और जलचर प्राणियों के उदार की भी तृप्ति करें। इस क्रम में ही हम अपने चूल्हे से उतरने वाली प्रथाम अथवा इस से कुछ अधिक रोटियों को अलग रख कर फिर परिवार के सदस्यों को भोजन दिया जाता था। यह जो रोटियाँ पहले से अलग रखते थे, यह पशु पक्षियों आदि के लिए होती थीं। इसका भाव यह होता है कि पहले अन्य प्राणियों को खिला कर फिर हम खावें अर्थात्

हमारे आस पास कोई भी भूखा न रहे। जब हम इस प्रकार से अपन्बे जीवन को चालते हैं तो हमारा जीवन प्रसन्नता से भर जाता है। यह प्रसन्नता ही सब सुखों का द्वार है।

सब का पालन करना भी हमारे जीवन का एक उद्देश्य तथा एक यज्ञ है। ऊपर बताया गया है कि दूसरों को खिला कर फिर खाना , प्राणी मात्र को तृप्त कर फिर अपने पेट में ग्रास डालना, बस यह ही प्राणी मात्र का पालन करना होता है। इस सृष्टि में कर्म करने का अधिकार केवल मनुष्य को दिया गया है। अन्य सब प्राणी तो मनुष्य के किये गए कर्म में से ही हिस्सा पाते हैं। इस प्रकार प्रत्येक मनुष्य सदा अन्य जीवों के पालन के लिए भी पुरुषार्थ करे। इससे भी हमें सदा मिलती है, जो हमारे सुखों को बढाने वाली होती है।

घर में ध्रुव रहना :-
ध्रुव कहते हैं स्थिर को। घर को स्थिर रखने का कार्य माता अथवा महिला ही करती है, जो पूरा समय घर के अन्दर ही रहती है। पुरुष तो दिन भर अपने जीवन यापन के लिए कार्य करते हुए घर से दूर ही रहता है। अनेक बार तो वह घर से इतना दूर हो जाता है कि वह अनेक महीने या वर्ष भर भी निरंतर घर से दूर रह जाता है। ऐसी अवस्था में घर की सब व्यवस्था गृह स्वामिनी को ही बनानी होती है। इस लिए यदि नारी कभी विचलित नहीं होगी, पथभ्रष्ट नहीं होगी, घर के बनाए गए नियमों से बंधी रहेगी तो निश्चय ही वह स्थिर होगी, ध्रुव होगी। यदि नारी स्थिर है तो घर सुख सुविधाओं का केंद्र बन जाता है। जब घर में सब प्रकार की सुविधायें मिल जाती है तो निश्चय ही घर का प्रत्येक सदस्य प्रसन्न होकर सुखी होता है।

तेज को धारण करें उग्र नहीं बनें:-
मन्त्र यह भी उपदेश कर रहा है कि हम तेज को धारण करें। यदि हम तेजस्वी होते हैं तो उत्तम स्वास्थय हमें उन्नति पथ पर बढ़ने से कभी बाधक नहीं होता किन्तु जब तेज ही हमारे पास नहीं होता तो हमारा चेहरा हर पल लटका सा, उदासीन सा ही रहता है। चेहरे पर खुशी कभी दिखाई ही नहीं देती। इसलिए हमें तेजस्वी बनने के लिए सदा अपने आप को किसी कार्य अथवा ईशाराधाना में लगाए रखना होता है। पुरुषार्थ करते हुए प्रतिदिन योग-व्यायाम आदि भी करना होता है। इस सब से हम तेजस्वी होते हैं। जब हमारे में तेज होगा तो प्रसन्नता स्वयमेव ही आ जावेगी जो हमें सुखी रखेगी।

इसके साथ ही मन्त्र कहता है कि हम तेज को तो प्राप्त करें किन्तु उग्रता को arthaat क्रोध को अपने पास न आने दें। क्रोध से पागल हुआ व्यक्ति न तो स्वयं सुखी रहता है और न ही अपने परिजनों को ही सुखी रहने देता है क्योंकि इन सबके पास प्रसन्नता आ ही नहीं पाती। इसलिए उग्रता को कभी अपने पास भी न आने देना।

परिवार में प्रेमपूर्ण वातावरण बनाएँ :
जहां लड़ाई झगडा कलह क्लेश होता है, वहां से प्रसन्नता बहुत दूर चली जाती है। जब प्रसन्नता ही नहीं होगी तो सुख कहाँ से आवेगा ? इसलिए भी आवश्यकता है कि परिवार का वातावरण सदा ही प्रेम से भरा हुआ सौहार्द पूर्ण होना भी सुख के अभिलाषी प्राणी के लिए आवश्यक होता है।

हमने जो भी कार्य करना होता है, उसे एक व्यवस्था के अनुसार करें। यह न हो कि भजन के समय तो हम विश्राम करने लगें और विश्राम के समय भोजन की इच्छा रखें। अत : एक व्यवस्था निर्धारित कर लें।

अपने दिन भर के कार्यों की समयसारिणी बना लें और इस समय सारिणी के अनुसार जो काम करने के लिए जो समय निश्चित किया गया हो, उसे उस समय पर ही करें। व्यवस्थित जीवन भी प्रसन्नता और सुखों का कारण होता है।

यज्ञ को कभी विच्छिन्न न होने दें:-
जिस प्रकार हमारे लिए प्रतिदिन भोजन आवश्यक है, उस प्रकार ही हमारे जीवन में यज्ञ भी आवश्यक होता है। अपनी इस आवश्यकता को स्मरण रखें और इसे कभी भूलें नहीं। प्रतिदिन यज्ञ को नियम पूर्वक करें। यहाँ तक यज्ञ के आदी बन जावें की किसी दिन भोजन तो चाहे छूट जावे किन्तु यज्ञ नहीं छूटना चाहिए। इस यज्ञ से हमारा वायु मंडल, हमारा भवन, हमारा ह्रदय, हमारा शरीर आदि सब कुछ शुद्ध और पवित्र हो जाता है तथा हम स्वस्थ रहते हुए सब खुशियों को प्राप्त करने के कारण सुखी होते हैं।इसलिए यज्ञ को कभी बाधित न होने दें।

डॉ. अशोक आर्य
पॉकेट १/ ६१ रामप्रस्थ ग्रीन से, ७ वैशाली
२०१०१२ गाजियाबाद उ. प्र. भारत
चलभाष ९३५ ४८ ४५ ४२६ e mail ashokarya1944@rediffmail.com